KAAV INTERNATIONAL JOURNAL OF ARTS,HUMANITIES

& SOCIAL SCIENCES

# गीता का सांख्ययोग

**सुनीता रानी**

**(सहायक प्रोफेसर)**

**संस्कृत, श्री कपिल मुनि महिला कॉलेज**

**कलायत (कैथल)**

**शोध आलेख सार –**

सम्पूर्ण भारतीय साहित्य में श्रीमदभगवद्गीता का अति महत्वपूर्ण स्थान है। यह भगवान श्री कृष्ण के मुखारविन्द से निकला एक उतम गीत है ''यास्वयं पद्मनाभसथ मुखपद्माद्विनिः सृता''। इसलिये इस दिव्य ग्रन्थ का नाम श्रीमद्भगवद्गीता है। यह महर्षि वेदव्यास द्वारा विरचित महाभारत रूपी सागर का अमृत है–'' भारतामृतर्स्वस्वम्''। भगवान श्री कृष्ण ने कुरूक्षेत्र की युद्व भूमि में मोहवश अपने धर्मयुद्व रूपी कर्म से विमुख हुये अुर्जन को जो उपदेश दिया है वह किसी धर्म, जाति व समुदाय के लिये नहीं है। अपितु यह तो मानवमात्र के लिये हितकर एक अद्भुत संदेश है। गीता मानव को अपने –2 कर्म में प्रवृत करने की सत्प्रेरणा देती है। यह सम्पूर्ण ग्रन्थ 18 अध्यायों में विभक्त है। प्रत्येक अध्याय अपने भीतर नवीन विषय और नवीन दर्शन समाहित किए हुए हैं।

**मुख्य शब्द –**

सांख्य योग, आत्मतत्व का श्रवण, मनन, निदिध्यासन, कर्मयोग स्वरूप अर्चस, कर्त्ता, ब्राह्मी स्थिति ।

**Copyright © 2017 Published by kaav publications. All rights reserved** 

श्री मदभगवत् गीता का विषय के साहित्य में उॅचा स्थान है। गीता समस्त शास्त्रों का सार है। यह व्यवहारयोग और कतर्त्यशास्त्र की सबसे बडी खान है। यह भारत का राष्ट्रीय धर्म ग्रन्थ है। गीता में ज्ञान कर्म और भक्ति की त्रिवेणी समान्तर रूप से प्रवाहित हो रही है। महाभारत के 18 पर्वो में गीता ने जो ख्याति प्राप्त की है। वह विश्व में दुलर्भ है। यह एक ऐसा ग्रन्थ है जिसे सवर्धा सत्य मानकर लोग इस पर हाथ रखकर सत्य की सौगन्ध खाते हैं।

महर्षि कृष्ण द्वैपायन वेद व्यास विलिखित योगिराज श्री कृष्ण प्रोक्त यह ग्रन्थ अनुपम एंव अद्वितिय है। इसमें कहीं कर्म योग, कहीं ज्ञान योग, कहीं ध्यान योग कहीं भक्ति योग तथा कंही संख्य योग में मौक्तिक यन्त्र–तन्त्र बिखरे हुये हैं। इस ग्रन्थ का मूल उद्देश्य दोनों सेनाओं के मध्य अर्जुन को हुये शोक विषाद का निवारण तथा संसार की सत्यता का दर्शन, शरीर और आत्मा के सम्बन्ध के यर्थाथ स्वरूप का भान करवा रहा है।

श्रीमद्भगवद्गीता का द्वितिय अध्याय '' सांख्ययोग'' है। इस अध्याय में शरणागत अर्जुन द्वारा अपने शोक की निवृति के लिये एकान्तिक उपाय पूछे जाने पर भगवान श्री कृष्ण ने आत्मतत्व का वर्णन किया है। सांख्ययोग के साधन में आत्मतत्व का श्रवण मनन निदिध्यासन ही मुख्य है। यधपि इस अध्याय में स्वधर्म का वर्णन करनके कर्मयोग स्वरूप भी समझाया गया है। परन्तु उपदेश का आरंभ सांख्ययोग से ही हुआ है।

गीता अपने कर्म से च्युत मनुष्य को ज्ञान का उत्कृष्ट उपदेश देती है। गीता कहती हे कि शरीर नश्वर है तथा इसमें विद्यमान आत्मा अजर, अमर तथा अविनाशी है। अत : देह के प्रति आसक्ति का त्याग कर आत्मज्ञान की प्राप्ति के लिये प्रयत्न करना चाहिए क्यों कि इससें ही परम शान्ति प्राप्त होती हे।

''ज्ञान लब्धवा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति।

गीता का उपदेश है कि मनुष्य जो भी कर्म करे, वह ईश्वर को समर्पण करके करे। परमात्मा की शरण में पहुंचकर व्यक्ति पापमुक्त होकर परम शान्ति को प्राप्त करता है यथा –

सर्वधर्मान् परित्यन्य मामेकं शरणं व्रज।

अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।।

Copyright © 2017 Published by kaav publications. All rights reserved www.kaavpublications.org

इस प्रकार गीता में कर्म भक्ति और ज्ञान का अद्भुत समन्वय है। तीनों ही मार्ग एक दूसरे के पूरक है। गीता के महत्व के विषय में लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने गीता रहस्य में लिखा है।

''भक्ति और ज्ञान का मेल कराके, इन दोनों का शास्त्रोक्त व्यवहार के साथ संयोग करा देने वाला और इसके द्वारा संसार से दुखित मनुष्यों को शान्ति देकर, निष्काम कर्तव्य के आचरण में लगा देने वाला, गीता के समान बालबोध ग्रन्थ, संस्कृत की कौन कहे, समस्त संसार के साहित्य में नहीं मिल सकता''

## संसार की निस्सारता –

देहिनो ऽस्मिन्यथा देहे कौमारं यौवनं जरा,
तथा देहान्तर प्राप्ति धीरस्तत्र न मुह्यति।। (गीता :2.13)

जब जीवात्मा जन्म लेता है तो इस देही के देह में जिस प्रकार बालकपन जवानी और बुढापा या तीन अवस्था है। इनमें देह बदलता है देही नहीं इस प्रकार देहान्तर की प्राप्ति एक चौथी अवस्था है इसलिये बुद्विमान इसमें धोखा नहीं खाता।

यं हि न व्ययन्येते पुरूष पुरूषर्षभ।
समसुख दख धीर सोऽमृतवाय कल्पते।। (गीता 2.15)

अर्थात जिस धीर पुरूष ने अपने आपको सुख दुख दोनों अवस्थाओं में समान रखना सीख लियाहै उसने पूर्वोक्त श्लोक में वर्णित मात्रा स्पर्शादि व्यथित नहीं कर सकते तथा वही व्यक्ति अमृत पदवी पाने में समर्थ होता है।

जो मानव सब कामनाओं को छोडकर स्पृहा हित होकर ममता रहित तथा अंहकार रहित होकर विचारता है वही शान्ति पाता है यथाः

ईशा वास्यमिदंसर्व यत्किच जगत्यां जगत्।
तेन यक्तेन भुस्जीया भागृध कस्यस्विद् धनभ्।। (ई.श.1.1)

ईश्वर भक्त सभी प्रकार के पापों से मुक्त हो जाते है क्योंकि वे यज्ञ में अर्पित किये भोजन को ही ग्रहण करते हैं। अन्य लोग जो अपने निमित इन्द्रियसुख के लिये भोजन ग्रहण करते हैं वे निश्चित रूप से पाप खाते हैं।–

अन्नपतेऽ नस्य नो देहचनभीवस्थ शुष्मिणः
प्र दातर तारिष उर्ज नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे।। (यजु 11.83)

अर्थात हे अन्न के स्वामी प्रभो हमें रोगरहित बलकारक अन्न प्रदान कीजिए। इस जगत में भी अन्न के प्रदाताओं को दुखसागर के तारे और हम दो पैरों वाले तथा चार पैंरों वाले गौ आदि पशुओ को अन्न से उर्जाबल और पराक्रम प्रदान करें।

मोधमन्न विन्दते अप्रचेता सत्य ब्रवीमि वध इत सतस्त ।
नार्यमणं पुष्यति नो सखायं केवलाधो भवति केवलादी ।। (ऋ010117.6)

Copyright © 2017 Published by kaav publications. All rights reserved www.kaavpublications.org

अर्थात संसार में जो अकेला अन्य का उपभोग करता है वह मूढ़ पापपूर्ण अन्न का ही सेवन करता है जो अन्न भाग से न राजा को पुष्ट करता है और न ही समय पर मित्र की सहायता करता है। वह केवल पाप का ही सेवन करता है। यह सत्य है कि उसका विनाश निश्चित है।

आत्मा की गहनता व सूक्ष्मता का वर्णन –

न जायते मियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणों न हन्यते हन्यमाने शरीरे ।।(गी0220)

यह आत्मा किसी भी काल में न जन्म लेता है न मरता है। अथवा न होकर फिर होने वाला है। यह आत्मा तो अजन्मा नित्य, शाश्वत और पुरातन है जैसे इस शरीर में कुमारावस्था, युवावस्था और जरावस्था आती है वैसे ही आत्मा एक शरीर के बाद दूसरा शरीर बदलती रहती है श्री कृष्ण अर्जुन को समझाते हैं कि तु युद्व क्षेत्र में भीष्मादि को देखकर दुखी मत हो, यदि युद्व में ये मर भी जायेगें तो केवल शरीर नष्ट होगा, उसमें विधमान आत्मा नहीं क्यों कि आत्मा जन्म मरण के धर्म से रहित है । यह जन्म न लेने वाला सदैव रहने वाला तथा अत्यन्त पुरातन है।

**कर्म विवेचन –**

गीता का वचन है कि :–

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलेहतुर्भूर्मा ते संगोस्त्वकर्मणि ।। (गी02 47)

अर्थात कर्म करने में ही तेरा अधिकार है फल में नहीं इस गीता के श्लोक का आर्विभाव साक्षात वेद से ही प्रतीत होता है जैसा कि यर्जुवेद का कथन है। कि – कुर्वन्नैवेह कर्माणि जिजिविषेच्छतं समां।

अर्थात हे मानव तू उतम यजादि कर्म करते हुए सौ वर्ष जीने की इच्छा कर यही तेरे लिये उचित है। इससे भिन्न मार्ग तेरे लिये उचित नहीं हे। इस प्रकार का जीवन जीत हुये तुझमें कर्मो का लेप अर्थात बन्धन नही होगा। वेद बिना जाति भेद वर्णभेद के सबके लिये संगठन की बात करता है वेद भी गुण कर्मानुसार वर्णव्यवस्था की बात करते तथा गीता में श्री कृष्ण भी साक्षात गुण कर्म स्वभाव के अनुसार वर्ण स्थापना की स्वीकार करते हैं इन्हीं सामानताओं के आधार पर गीता को गीतापनिषद के नाम से जाना जाता हे–

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद दुःखभागभवेत्।।

Copyright © 2017 Published by kaav publications. All rights reserved www.kaavpublications.org

गीता मनुष्य का ध्यान कर्म पर केन्द्रित करता है परन्तु साधारण व्यक्ति अपना ध्यान कर्मफल पर केन्द्रित रखते हैं परिणाम यह होता है कि कर्म पर पूरा ध्यान केन्द्रित न होने के कारण कर्म अधूरा रह जाता है जिसके परिणामस्वरूप फल भी अधूरा रहा जाता है। इसलिये फलाासक्त मनुष्य दुःख अशान्ति और मानसिक दबाव मे डुबकर अपना जीवन नरक बना लेता है। जब कि निष्काम कर्म करने वाले व्यक्ति के जीवन में कुछ विशेषताएं पैदा हो जाती है। जब मनुष्य निष्काम भाव में होता है। तब फल का लोभ न होने से वह बुरे काम कर ही नहीं पाता। सत्कर्म और दुष्कर्म से उपर उठ जाता है। सकाम व्यक्ति अच्छा फल पाने के लिये अच्छा कर्म करता है परन्तु निष्काम व्यक्ति की ऐसे सत्कर्म में कोई आसक्ति नहीं होती ।

वह तो अपने कर्तव्य कर्म को ही पूर्ण कुशलता और पूर्ण उर्जा के साथ करता है। कर्मफल त्याग का अर्थ कर्म का त्याग नहीं अपितु कर्म को और भी अधिक कुशलता और चतुराई से करना है। इसे ही गीता में '' योगः कर्मसु कौशलम् कहा गया है। सिद्वि आसिद्वि सफलता –असफलता दोनों में ही वह समभाव रहता है। इसलिये इसे ही ''समत्व योग भी कहा जाता है। –

समत्व योग उच्यते।
सुख दुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ।
ततो युद्वाय युज्यस्व नैंव पापमवाप्सयासि।। (गीता 2.38)

श्री कृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि युद्व होगा तो जय होती है अथवा पराज्य , जय से लाभ और पराजय से हानि होती है। लाभ से सुख और हानि से दुख होता है। परन्तु तुम्हें सुख–दुख, जय–पराजय में समभाव रखता हुआ क्षत्रियधर्मानुकूल युद्व करने पर तू पाप का भागी नहीं बनेगा।

गीता की तरह ही उापनिषदों में भी परामात्म तत्व प्राप्ति का साधन पुविापासना को बताया गया है। कठोपनिषद में कहा गया है यह औंकार ही ब्रह है, नित्य है सनातन है।

आत्म तत्व जीवात्मा + परमात्मा

मुख्य उक्ति – ''आत्मा रथिनं विद्विण शरीर रथः बुद्वि सारथी, इन्द्रियाणि अश्वाः मनः प्रगृहः शब्दस्पर्शादयोः: विषयाः।।

इन्द्रिय और मन से युक्त आत्मा विषय की भोक्ता है। शरीर रथ है। बुद्वि सारथी है जै शुद्व जल में डाला हुआ जल पवित्र होता हे। जीवात्मा और परामात्मा शुद्व व एकरूप होते है। आत्मा का नगर ।। द्वारों वाला है। मनुष्य के शरीर में 9 द्वार है। आत्मा आकाश में आदित्य रूप में, अंतरिक्ष में वस्तु मे, यज्ञवेदी में अग्नि रूप में कलश में

Copyright © 2017 Published by kaav publications. All rights reserved www.kaavpublications.org

सोमरूप में प्राणादि रूप में देवताओं में चैतन्य रूप में, आकाश में गृह नक्षत्रादि रूप में, यज्ञ में ऋत्विक रूप में अवस्थित है।

गीता अनासक्त भाव से मनुष्य को कर्म करने की सलाह देती है । फलाश त्याग कर तथा उत्सर्ग की भावना अपनाकर ही कोई मनुष्य अपने को शुद्व कर सकता है। मनुष्य के रक्त में मनुष्य के हदय को निर्मल बनाने की क्षमता नहीं है, पर मन की वासनाओं का परित्याग कर कोई भी व्यक्ति अपने हदय को पवित्र बना सकता है। देहिक प्रलोभनों पर जो जितना अधिकारी विजय पाता है। वह उतना ही लक्ष्य के निकट पहुंचता है। लक्ष्य का तात्पर्य निष्काम कर्म से है। निष्काम कर्म के भी लक्ष्य हैं। आत्मलाभ और ईश्वरप्राप्ति। आत्मलाभ से तात्पर्य है ब्राही स्थिति की उपलब्धि। कर्मयोग की यह स्र्वोत्कृष्ट उपलब्धि है। इससे मोक्ष की प्राप्ति होती है।

एषा ब्राही स्थितिः पार्थ नैना प्राप्य विमुञचति ।
स्थित्वास्थामन्तकालेऽपि ब्रहानिर्वाणमृच्छति । (गी0 2.72)

इसी तरह ईश्वर प्राप्ति का अर्थ है –ईश्वर के सामीप्य की अनुभूति । गीता में श्री कृष्ण का कथन है कि जीवन के अन्त में जो केवल ईश्वर का स्मरण करते हुए शरीर का त्याग करता है वह शीघ्र ही ईश्वरत्व के स्वभाव को प्राप्त करता है। इसमें लेशमात्र भी सन्देह नहीं करना चाहिए। श्री कृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि ब्रहा ज्ञान की दशा में मोह या अज्ञान समाप्त हो जाता है और अन्त में ब्रहनन्द प्रदान करने वाली मुक्ति मिलती है।

## संदर्भ सूची –

श्रीमद्भगवद ्गीता, 2.13
श्रीमद्भगवद ्गीता, 2.13
ईशावास्योपनिषद् 1.1
यजुर्वेद, 11.83
श्रीमद्भगवद्गीता, 2.72
कठोपनिषद्. 1.1.7
श्रीमद्भगवद्गीता, 2.20
ऋग्वेद– 10.117.6
यजुर्वेद–40.2
श्रीमद्भगवद्गीता, 2.15

Copyright © 2017 Published by kaav publications. All rights reserved www.kaavpublications.org